कवर चित्र नं. 3 (कल्पवृक्ष):-

सृष्टि रूपी कल्पवृक्ष एक अनोखा वृक्ष है; क्योंकि अन्य वृक्ष की भाँति इस वृक्ष का बीज नीचे नहीं; बल्कि ऊपर की ओर है। प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा मनुष्य-सृष्टि रूपी वृक्ष के अविनाशी और चैतन्य बीज और कोई नहीं, स्वयं परमपिता+परमात्मा शिव ही हैं, जो परमधामी स्टेज में रहते हैं और उनकी रचना नीचे की ओर है। निराकारी आत्माओं का बाप परमपिता शिव, साकारी मनुष्यों का बाप प्रजापिता ब्रह्मा के मुख कमल द्वारा कहते हैं कि **'मैं इस सृष्टि रूपी कल्पवृक्ष का अविनाशी बीजरूप हूँ और जैसे सामान्य बीज में वृक्ष का सार समाया होता है, उसी प्रकार मुझमें इस सृष्टि रूपी वृक्ष के आदि, मध्य और अंत का ज्ञान है। जब यह वृक्ष जड़जड़ीभूत हो जाता है तो मैं ही आकर सत्य ज्ञान एवं राजयोग द्वारा फिर नए सिरे से इसका बीजारोपण करता हूँ या सैपलिंग लगाता हूँ।'**

Cover Picture No.3
कवर चित्र नं. 3

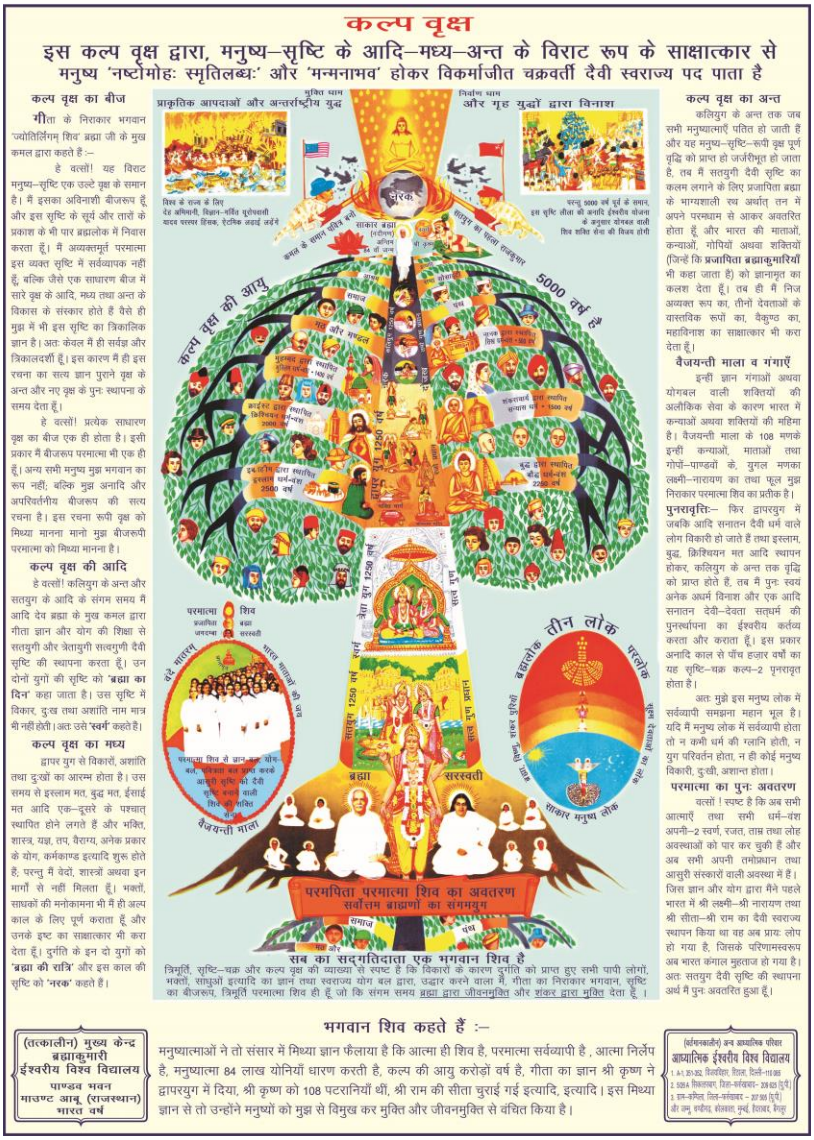

चित्र में इस उल्टे वृक्ष को मात्र समझने के लिए सीधे रूप में दिखाया गया है। इसमें सबसे नीचे कलियुग के अंत और सतयुग के आरम्भ का संगम दिखाया गया है। कलियुग अंत में जब यह वृक्ष जड़जड़ीभूत हो जाता है तो स्वयं परमपिता शिव, जो इसके बीजरूप हैं, वे आदि सनातन देवी-देवता धर्म की सैपलिंग लगाने के लिए प्रजापिता ब्रह्मा के तन में प्रवेश कर, उनके मुख कमल से सृष्टि के आदि, मध्य और अंत का

गीता-ज्ञान और राजयोग की शिक्षा देते हैं। इस ज्ञान से जगदम्बा और मुखवंशावली पवित्र ब्राह्मणों की रचना होती है, जिन्हें 'प्रजापिता ब्रह्माकुमार-ब्रह्माकुमारियाँ या शिवशक्ति पांडव' भी कहते हैं। कल्प के अंत में शिव भगवान के इस अवतरण समय को ही **'संगमयुग या गीता युग'** कहते हैं। संगमयुग के बाद सतयुग और उसके पश्चात् त्रेतायुग का आरम्भ होता है, जिसको भारत के इतिहास का स्वर्णयुग और रजतयुग कहा जा सकता है; क्योंकि प्रत्येक मनुष्य देवी-देवता होता है। जैसा कि सृष्टि-चक्र के अध्याय में बताया गया है कि सतयुग में सूर्यवंशी लक्ष्मी-नारायण एवं उनके वंशजों का तथा त्रेतायुग में चंद्रवंशी सीता-राम एवं उनके वंशजों का अटल, अखंड, निर्विघ्न, सुख-शांतिमय राज्य चलता है। वहाँ केवल एक आदि सनातन देवी-देवता धर्म होता है, जो कि किसी प्रकार के बाह्य आडम्बरों से रहित, दिव्य गुण सम्पन्न जीवन जीने का एक मार्ग था। आज की परिस्थिति के विपरीत वहाँ धर्म और राज्य का अलग-2 अस्तित्व नहीं था। दोनों सत्ताएँ (धर्म सत्ता और राज्य सत्ता) लक्ष्मी-नारायण और सीता-राम के हाथों में ही थीं; इसलिए न वहाँ मंत्री की आवश्यकता थी, न राजगुरू की, न न्यायाधीश की और न सेनापति की, न वहाँ डॉक्टर थे और न वकील; क्योंकि वहाँ विकारों का नाम-निशान नहीं था। स्वर्ग में केवल एक राज्य, एक धर्म, एक मत, एक भाषा और एक कुल था और यह स्वर्ग केवल भारत में ही था या दूसरे शब्दों में, भारत ही विश्व था; क्योंकि अन्य भूखंड समुद्र में समाए हुए थे। उस भारत को ही वैकुण्ठ, बहिश्त या हैविन कहा जाता है। कल्पवृक्ष की इस अवधि को उसकी आदि कहा जा सकता है।

इसके पश्चात् जब आत्माभिमानी देवताएँ देहभान में आकर वाममार्ग की ओर प्रस्थान करते हैं अर्थात् विकारी बन जाते हैं, तब द्वापरयुग या कल्पवृक्ष का मध्य भाग आरम्भ होता है। देवताएँ कर्मभ्रष्ट और धर्मभ्रष्ट हो जाते हैं। देवी-देवता धर्म के रचयिता को भूले हुए ये भारतवासी **'हिंदू'** कहलाने लगते हैं। ऐसे समय पर परमधाम से एक धर्मपिता, **'इब्राहीम'** की आत्मा किसी भारतीय मनुष्य में प्रवेश कर **'इस्लाम धर्म'** की स्थापना करती है; किंतु पवित्रता को मान्यता न देने के कारण इस धर्म के अनुयायियों को पश्चिम की ओर पलायन करना पड़ता है, जहाँ द्वापरयुग के प्रारम्भ के साथ ही इस्लामी धर्मखंड, अरब देश समुद्र से ऊपर आ चुका होता है। इब्राहीम के बाद कई धर्मगुरू (प्रोफेट) हुए, जिनमें से एक **'ईसा मसीह (जीज़स क्राइस्ट)'** ने आज से 2000 वर्ष पूर्व **'ईसाई (क्रिश्चियन) धर्म'** की स्थापना की। वास्तव में क्राइस्ट की आत्मा भी इब्राहीम की भाँति परमधाम से आकर किसी मनुष्य (जीज़स) में प्रवेश कर अपने धर्म की स्थापना करती है। यह धर्म यूरोप में विकसित होता है, जिसे क्रिश्चियन धर्मखंड कह सकते हैं। इधर भारत में द्वापरयुग के प्रारम्भिक 250 वर्ष के बाद परमधाम से **'महात्मा बुद्ध'** की आत्मा आकर सिद्धार्थ नामक राजकुमार में प्रवेश कर **'बौद्ध धर्म'** की स्थापना करती है। हालाँकि यह धर्म प्रारम्भ में भारत में विकसित होता है; किंतु जल्द ही यहाँ उसका पतन हो जाता है और इसका विकास भारत के उत्तरपूर्व में स्थित देशों में होता है, जिसे चीन-जापानादि बौद्धी धर्मखंड कह सकते हैं। द्वापरयुग के अंतिम भाग में अर्थात् ईसा पश्चात् छठी शताब्दी में भारत में धार्मिक अशांति या कलह-क्लेश को मिटाने के लिए परमधाम से एक धर्मपिता का आगमन होता है, वह वास्तव में **'शंकराचार्य'** की आत्मा ही थी, जो एक 8 वर्षीय बालक के तन में प्रवेश कर **'संन्यास धर्म'** की स्थापना करती है। हालाँकि उनके पहले भी बौद्ध भिक्षु घरबार छोड़ मठों में रहते थे; किंतु वहाँ भिक्षु और भिक्षुणियाँ एक साथ रहते थे; इसलिए उन्हें पूर्ण संन्यासी नहीं कहेंगे।

इसके पश्चात्, कल्पवृक्ष के अंतिम भाग अर्थात् कलियुग का प्रारम्भ होता है, जहाँ अल्प अवधि में अनेक धर्मों एवं मत-मतान्तरों की स्थापना होती है और इसके फलस्वरूप, मनुष्यात्माएँ आस्तिक से लगभग नास्तिक बनने लग जाती हैं। द्वापर के अंत और कलियुग के प्रारम्भ में, जहाँ एक ओर अरब देशों में **हजरत मोहम्मद** द्वारा **मुस्लिम धर्म** की स्थापना होती है, उसके मुकाबले भारत में (आज से लगभग 500 वर्ष पूर्व) **गुरूनानक** द्वारा **सिक्ख धर्म** की स्थापना होती है। कलियुग के अंतिम 200-300 वर्षों में एक ओर भारत में **स्वामी दयानंद सरस्वती** द्वारा **आर्य समाज नामक धर्म** की स्थापना होती है, तो दूसरी ओर रूस में

लेनिन-स्टालिन द्वारा **नास्तिक धर्म या साम्यवाद** की स्थापना होती है। हालाँकि लेनिन से पूर्व भी साम्यवादी विचारधारा का प्रारम्भ हुआ था; किंतु वास्तव में सर्वप्रथम जनसत्ता केवल लेनिन को ही मिली, जिन्होंने रूस में राजाई का अंत कर दिया था। अतः वे ही नास्तिक धर्म के वास्तविक संस्थापक हैं। इसके अलावा, कलियुग में कई छोटे-2 मत-मतांतरों, मठों आदि की स्थापना हुई। द्वापरयुग से अनेक धर्मों के चक्रों में फिरते-2 मनुष्यात्माएँ कलाहीन, गुणहीन और लगभग नास्तिक बन जाती हैं, तब कलियुग के अंतिम समय में स्वयं निराकार शिव एक साधारण मनुष्य के तन में आकर, मनुष्य-सृष्टि से हर धर्म की चुनी हुईं आत्माओं को एकत्र करके, उन्हें राजयोग सिखाकर एक माला में पिरोते हैं। परमपिता+परमात्मा कहते हैं कि 'मैं ही द्वापरयुग से अत्याचार सहती आ रही भारत की माताओं और कन्याओं को आकर ज्ञान-अमृत का कलश देता हूँ।' भारत की इन्हीं शक्तियों या ज्ञान-गंगाओं तथा उनके युगल मणकों को वैजयंती माला के रूप में चित्र में दर्शाया गया है। इस माला में लाल फूल के रूप में स्वयं परमपिता शिव हैं तथा प्रथम युगल मणके हैं इस सृष्टि के मात-पिता अर्थात् जगदम्बा और जगतपिता (या प्रजापिता), जो अभी सृष्टि पर कार्य कर रहे हैं। इस माला में नास्तिक धर्म को छोड़कर, 9 मुख्य धर्मों की मुख्य आत्माएँ हैं, जो परमपिता+परमात्मा के कार्य में विशेष सहयोगी बनती हैं; इसलिए उन धर्मों के अनुयायी किसी और बाह्याडम्बरों को लेकर आपस में क्यों न लड़ें; पर हरेक यह माला ज़रूर जपते हैं। चूँकि नास्तिक धर्म न आत्मा, न परमात्मा और न परमात्म ज्ञान को मानता है; इसलिए इस माला में उसे कोई स्थान नहीं मिलता।

जहाँ देवी-देवता सनातन धर्म की नींव स्वयं निराकार परमपिता+परमात्मा रखते हैं, वहीं अन्य धर्मों की नींव देहधारी धर्मपिताएँ रखते हैं। चूँकि परमपिता शिव इस सृष्टि के रचयिता हैं; अतः वे देवी-देवता धर्म की नींव रखने के लिए सभी मनुष्यों में श्रेष्ठ प्रजापिता का आधार लेते हैं। बाकी धर्मपिताएँ अपनी-2 शक्ति के अनुसार नम्बरवार मनुष्यों का आधार लेते हैं। धर्म स्थापन करने के बाद हर धर्मपिता एवं उनकी आधारमूर्त आत्मा अपने-2 धर्म में ही पुनर्जन्म लेती रहती हैं और संगमयुग प्रारम्भ होते ही हर धर्म की आधारमूर्त आत्मा परमपिता शिव से ज्ञान प्राप्त कर ब्राह्मण अर्थात् ब्रह्मापुत्र बन जाती है; किंतु उन धर्मों के धर्मपिताएँ संगमयुग के अंत में इन आधारमूर्त आत्माओं के द्वारा ज्ञान प्राप्त कर, उनको पहचानते और शक्ति प्राप्त करते हैं और जब संगमयुग में हर धर्म की आधारमूर्त आत्माएँ हैं तो ज़रूर उनको जन्म देने वाली बीजरूप आत्माएँ भी होती हैं; क्योंकि जड़ों से भी शक्तिशाली बीज होते हैं। संगमयुग में जो ब्राह्मण आत्माएँ दादा लेखराज (टाइटिलधारी प्रजापिता ब्रह्मा) द्वारा सुनाए गए बेसिक ज्ञान को ही सर्वोपरि मानते हैं और धारण करते हैं, वे हैं **'आधारमूर्त आत्माएँ'** और जो बेसिक ज्ञान के साथ-2 प्रजापिता ब्रह्मा बनाम शंकर द्वारा सुनाए गए गुह्य ज्ञान (एडवांस ज्ञान) को भी पहले-2 समझते और धारण करते हैं, वे हैं **'बीजरूप आत्माएँ।'**

इस प्रकार कल्पवृक्ष का यह चित्र एक अनूठा चित्र है, जो अपने-आप में विश्व के सभी धर्मों के इतिहास को समाए हुए है, जिसे पहचान कर मनुष्यात्माओं को परमपिता+परमात्मा से मुक्ति-जीवनमुक्ति का वर्सा मिलता है।